रक्षाबंधन

- विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक'

'माँ मैं भी राखी बाँधूँगी'

श्रावण की धूम-धाम है। नगरवासी स्त्री-पुरुष बड़े आनन्द तथा उत्साह से श्रावणी का उत्साह मना रहे हैं। बहनें भाइयों के और ब्राह्मण अपने यजमानों के राखियाँ बाँध रहे हैं। ऐसे ही समय एक छोटे से घर में एक दस वर्ष की बालिका ने अपनी माता से कहा - माँ मैं भी राखी बाँधूँगी।

उत्तर में माता ने एक ठंडी साँस भरी और कहा - किसके बाँधेगी बेटी - आज तेरा भाई होता तो।

माता आगे कुछ न कह सकी । उसका गला रुँध गया और नेत्र अश्रुपूर्ण हो गए।

अबोध बालिका ने इठलाकर कहा - तो क्या भैया ही के राखी बाँधी जाती है और किसी के नहीं ? भैया नहीं है तो अम्मा मैं तुम्हारे ही राखी बाँधूँगी।

इस दुख के समय भी पुत्री की बात सुनकर माता मुस्कुराने लगी और बोली - अरी तू इतनी बड़ी हो गई - भला कहीं माँ के भी राखी बाँधी जाती है।

बालिका ने कहा - वाह जो पैसा दे उसी के राखी बाँधी जाती है।

माता - अरी पगली ! पैसे पर नहीं-भाई ही के राखी बाँधी जाती है।

बालिका उदास हो गई।

माता घर का काम काज करने लगी। घर के काम शेष करके उसने पुत्री से कहा - आ तुझे निहला (नहला) दूँ।

बालिका - मुख गम्भीर करके बोली - मैं नहीं नहाऊँगी।

माता - क्यों, नहावेगी क्यों नहीं ?

बालिका - मुझे क्या किसी के राखी बाँधनी है ?

माता - अरी राखी नहीं बाँधनी है तो क्या नहावेगी भी नहीं। आज त्योहार का दिन है चल उठ नहा।

बालिका - राखी नहीं बाँधूँगी तो त्योहार काहे का?

माता - (कुछ क्रुद्ध होकर) अरी कुछ सिड़न हो गई है। राखी, राखी रट लगा रक्खी है। बड़ी राखी बाँधने वाली बनी है। ऐसी ही होती तो आज यह दिन देखना पड़ता। पैदा होते ही बाप को खा बैठी। ढाई बरस की होते-होते भाई से घर छुड़ा दिया। तेरे ही कर्मों से सब नास (नाश) हो गया।

बालिका - बड़ी अप्रतिभ हुई और आँखों में आँसू भरे हुए चुपचाप नहाने को उठ खड़ी हुई।

× × ×

एक घण्टा पश्चात हम उसी बालिका को उसके घर के द्वार पर खड़ी देखते हैं। इस समय भी उसके सुन्दर मुख पर उदासी विद्यमान है। अब भी उसके बड़े-बडे नेत्रों में पानी छलछला रहा है, परन्तु बालिका इस समय द्वार पर क्यों। जान पड़ता है, वह किसी कार्यवश खड़ी है, क्योंकि उसके द्वार के सामने से जब कोई निकलता है तब वह बड़ी उत्सुकता से उसकी ओर ताकने लगती है। मानो वह मुख से कुछ कहे बिना केवल इच्छा शक्ति ही से, उस पुरुष का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने की चेष्टा करती थी, परन्तु जब उसे इसमें सफलता नहीं होती तब उसकी उदासी बढ़ जाती है। इसी प्रकार एक, दो, तीन करके कई पुरुष बिना उसकी ओर देखे निकल गए।

अन्त को बालिका निराश होकर घर के भीतर लौट जाने को उद्यत ही हुई थी कि एक सुन्दर युवक की दृष्टि जो कुछ सोचता हुआ धीरे-धीरे जा रहा था, बालिका पर पड़ी। बालिका की आँखें युवक की आँखों से जा लगीं। न जाने उन

उदास तथा करुणापूर्ण नेत्रों में क्या जादू भरा था कि युवक ठिठककर खड़ा हो गया और बड़े ध्यान से सिर से पैर तक देखने लगा। ध्यान से देखने पर युवक को ज्ञात हुआ कि बालिका की आँखें अश्रुपूर्ण हैं। तब वह अधीर हो उठा। निकट जाकर पूछा – बेटी क्यों रोती हो ?

बालिका इसका कुछ उत्तर न दे सकी, परन्तु उसने अपना एक हाथ युवक की ओर बढ़ा दिया। युवक ने देखा, बालिका के हाथ में एक लाल डोरा है। उसने पूछा – यह क्या है? बालिका ने आँखें नीची करके उत्तर दिया – राखी । युवक समझ गया । उसने मुस्कराकर अपना दाहिना हाथ आगे बढ़ा दिया।

बालिका का मुख-कमल-सा खिल उठा। उसने बड़े चाव से युवक के हाथ में राखी बाँध दी।

राखी बँधवा चुकने पर युवक ने जेब में हाथ डाला और दो रुपए निकालकर बालिका को देने लगा, परन्तु बालिका ने उन्हें लेना स्वीकार न किया। बोली – नहीं पैसे दो।

युवक – ये पैसे भी अच्छे हैं।

बालिका – नहीं-मैं पैसे लूँगी, यह नहीं।

युवक – ले लो बिटिया। इसके पैसे मँगा लेना बहुत से मिलेंगे।

बालिका – नहीं, पैसे दो।

युवक ने चार आने पैसे मिलाकर कहा – अच्छा ले पैसे भी ले और यह भी ले।

बालिका – नहीं, खाली पैसे लूँगी।

तुझे दोनों लेने पड़ेगे – यह कहकर युवक ने बलपूर्वक पैसे तथा रुपए बालिका के हाथ पर रख दिए। इतने में घर के भीतर से किसी ने पुकारा – अरी सरसुती (सरस्वती) कहाँ गई ?

बालिका ने – आई-कहकर युवक की ओर कृतज्ञता पूर्ण दृष्टि डाली और चली गई।

॥ 2 ॥

गोलगंज (लखनऊ) की एक बड़ी तथा सुन्दर अट्टालिका के एक सुसज्जित कमरे में एक युवक चिंता-सागर में निमग्न बैठा है। कभी वह ठण्डी साँसे भरता है; कभी रूमाल से आँखे पोंछता है, कभी आप ही आप कहता है – हा! सारा परिश्रम व्यर्थ गया। सारी चेष्टाएँ निष्फल हुईं। क्या करूँ। कहाँ जाऊँ, उन्हें कहाँ ढूँढूँ। सारा उन्नाव छान डाला। परन्तु फिर भी पता न लगा – युवक आगे कुछ और कहने को था कि कमरे का द्वार धीरे-धीरे खुला और एक नौकर अन्दर आया।

युवक ने कुछ विरक्त होकर पूछा – क्यों क्या है ?

नौकर – सरकार अमरनाथ बाबू आए हैं।

युवक – (सँभलकर) अच्छा यहीं भेज दो।

नौकर के चले जाने पर युवक ने रूमाल से आँखें पोंछ डालीं और मुख पर गम्भीरता लाने की चेष्टा करने लगा।

द्वार फिर खुला और एक युवक अन्दर आया।

आओ – भाई अमरनाथ

अमरनाथ – कहो घनश्याम, आज अकेले कैसे बैठे हो ? कानपुर से कब लौटे ?

घनश्याम – कल आया था ।

अमरनाथ – उन्नाव भी अवश्य ही उतरे होगे ?

घनश्याम – (एक ठंडी साँस भरकर) हाँ उतरा था, परन्तु व्यर्थ । वहाँ अब मेरा क्या रखा है।

अमरनाथ – परन्तु करो क्या ? हृदय नहीं मानता है – क्यों ? और सच पूछो तो बात ही ऐसी है। यदि तुम्हारे स्थान पर मैं होता तो मैं भी ऐसा ही करता।

घनश्याम – क्या कहूँ मित्र, मैं तो हार गया। तुम तो जानते ही हो कि मुझे लखनऊ आकर रहे एक वर्ष हो गया और जब से यहाँ आया हूँ उन्हें ढूँढ़ने में कुछ कसर उठा नहीं रक्खी परन्तु सब व्यर्थ।

अमरनाथ – उन्होंने उन्नाव न जाने क्यों छोड़ दिया और कब छोड़ा – इसका भी कोई पता नहीं चलता।

घनश्याम – इसका तो पता चल गया न, कि वे लोग मेरे चले जाने के एक वर्ष पश्चात् उन्नाव से चले गए, परन्तु कहाँ गए, यह नहीं मालूम।

अमरनाथ – यह किससे मालूम हुआ ?

घनश्याम – उसी मकान वाले से जिसके मकान में हम लोग रहते थे।

अमरनाथ – हाँ, शोक !

घनश्याम – कुछ नहीं, यह सब मेरे ही कर्मों का फल है। यदि मैं उन्हें छोड़कर न जाता; यदि गया था तो उनकी खोज खबर लेता रहता, परन्तु मैं तो दक्षिण जाकर रुपया कमाने में इतना व्यस्त रहा कि कभी याद ही न आई। और जो आई भी तो क्षणमात्र के लिए उफ, कोई भी अपने घर को भूल जाता है। मैं ही ऐसा अधम–

अमरनाथ – (बात काटकर) अजी नहीं सब समय की बात है।

घनश्याम – मैं दक्षिण न जाता तो अच्छा था।

अमरनाथ – तुम्हारा दक्षिण जाना तो व्यर्थ नहीं हुआ। यदि न जाते तो इतना धन ....।

घनश्याम – अजी चूल्हे में जाए धन। धन किस काम का । मेरे हृदय में सुख शांति नहीं तो धन किस मर्ज की दवा है।

अमरनाथ – ऐं, यह हाथ में लाल डोरा क्यों बाँधा है?

घनश्याम – इसकी तो बात ही भूल गया। यह राखी है।

अमरनाथ – भाई वाह, अच्छी राखी है। लाल डोरे को राखी बताते हो। यह किसने बाँधी है। किसी बड़े कंजूस ने बाँधी होगी। दुष्ट ने एक पैसा तक खरचना पाप समझा, डोरे ही से काम निकाला।

घनश्याम – संसार में यदि कोई बढ़िया से बढ़िया राखी बन सकती है तो मुझे उससे भी कहीं अधिक प्यारा यह लाल डोरा है। यह कहकर घनश्याम ने उसे खोलकर बड़े यत्नपूर्वक अपने बक्से में रख लिया।

अमरनाथ – भाई, तुम भी विचित्र मनुष्य हो। आखिर यह डोरा बाँधा किसने है?

घनश्याम – एक बालिका ने।

(पाठक समझ गए होंगे घनश्याम कौन है।)

अमरनाथ – बालिका ने कैसे बाँधा और कहाँ?

घनश्याम – कानपुर में।

घनश्याम ने सारी घटना कह सुनाई।

अमरनाथ – यदि यह बात है तो सत्य ही यह डोरा अमूल्य है।

घनश्याम – न जाने क्यों, उस बालिका का ध्यान मेरे मन से नहीं उतरता।

अमरनाथ – उसकी सरलता तथा प्रेम ने तुम्हारे हृदय पर प्रभाव डाला है। भला उसका नाम क्या है।

घनश्याम–नाम तो मुझे नहीं मालूम । भीतर से किसी ने उसका नाम लेकर पुकारा था, परन्तु मैं सुन न सका।

अमरनाथ–अच्छा, खैर। अब क्या करने का विचार है।

घनश्याम – धैर्य धरकर चुपचाप बैठने के अतिरिक्त और मैं कर ही क्या सकता हूँ। मुझसे जो हो सका, मैं कर चुका।

अमरनाथ – हाँ, यही ठीक भी है। ईश्वर पर छोड़ दो। देखो क्या होता है।

(पूर्वोक्त घटना हुए पाँच वर्ष व्यतीत हो गए। घनश्यामदास पिछली बातें प्रायः भूल गए हैं, परन्तु उस बालिका की याद कभी–कभी आ जाती है। उसे देखने वे एक बार कानपुर गए भी थे, परन्तु उसका पता न चला। उस घर में पूछने

पर ज्ञात हुआ कि वह वहाँ से, अपनी माता सहित, बहुत दिन हुए, न जाने कहाँ चली गई। इसके पश्चात ज्यों-ज्यों समय बीतता गया उसका ध्यान भी कम होता गया। पर अब भी जब वे अपना बक्स खोलते हैं तब कोई वस्तु देखकर चौंक पड़ते हैं; और साथ ही कोई पुराना दृश्य भी आँखों के सामने आ जाता है।)

घनश्याम – अभी तक अविवाहित हैं। पहिले तो उन्होंने निश्चय कर लिया था कि विवाह करेंगे ही नहीं। पर मित्रों के और स्वयं अपने अनुभव ने उनका यह विचार बदल दिया। अब वे विवाह करने पर तैयार हैं। पर अभी तक कोई कन्या उनकी रुचि के अनुसार नहीं मिली।

जेठ का महीना है। दिन भर की जला देने वाली धूप के पश्चात सूर्यास्त का समय अत्यंत सुखदाई प्रतीत हो रहा है। इस समय घनश्यामदास अपनी कोठी के बाग में मित्रों सहित बैठ मन्द-मन्द शीतल वायु का आनन्द ले रहे हैं। आपस में हास्यरसपूर्ण बातें हो रही हैं। बातें करते-करते एक मित्र ने कहा – अजी अभी तक अमरनाथ नहीं आए ?

घनश्याम – वह मनमौजी आदमी है। कहीं रम गया होगा।

दूसरा – नहीं रम नहीं, वह आजकल तुम्हारे लिए दुल्हन ढूँढ़ने की चिन्ता में रहता है।

घनश्याम – बड़े दिल्लगीबाज हो।

दूसरा – नहीं, दिल्लगी की बात नहीं है।

तीसरा – हाँ, परसों मुझसे यह भी कहता था कि घनश्याम का विवाह हो जाए तो मुझे चैन पड़े।

ये बातें हो ही रही थीं कि अमरनाथ लपकते हुए आ पहुँचे।

घनश्याम – आओ यार, बड़ी उमर – अभी तुम्हारी ही याद हो रही थी।

अमरनाथ – इस समय बोलिए नहीं, नहीं एकाध को मार बैठूँगा।

दूसरा – जान पड़ता है, कहीं से पिटकर आए हो।

अमरनाथ – तू फिर बोला – क्यों ?

दूसरा – क्यों बोलना किसी के हाथ क्या बेच खाया है ?

अमरनाथ – अच्छा दिल्लगी छोड़ो । एक आवश्यक बात है।

सब उत्सुक होकर बोले – कहो कहो, क्या बात है ?

अमरनाथ (घनश्याम से) तुम्हारे लिए दुल्हन ढूँढ़ ली है।

सब – (एक स्वर से) फिर क्या, तुम्हारी चाँदी है।

अमरनाथ – फिर वही दिल्लगी । यार तुम लोग अजीब आदमी हो।

तीसरा – अच्छा बताओ, कहाँ ढूँढ़ी है।

अमरनाथ – यहीं, लखनऊ में।

दूसरा – लड़की का पिता क्या करता है ?

अमनाथ – पिता तो स्वर्गवास करता है।

तीसरा – यह बुरी बात है।

अमरनाथ – लड़की है और उसकी माँ बस, तीसरा कोई नहीं। विवाह में कुछ मिलेगा भी नहीं। लड़की की माता बड़ी गरीब है।

दूसरा-यह उससे भी बुरी बात है।

तीसरा – उल्लू मर गए, पट्ठे छोड़ गए। घर भी ढूँढा तो गरीब । कहाँ हमारे घनश्याम इतने धनाढ्य और कहाँ ससुराल इतनी दरिद्र? लोग क्या कहेंगे ?

अमरनाथ – अरे भाई, कहने और न कहने वाले हमी तुम हैं और यहाँ उनका कौन बैठा है जो कहेगा।

घनश्यामदास ने एक ठण्डी साँस ली।

तीसरा – आपने क्या भलाई देखी जो यह सम्बन्ध करना विचारा है।

अमरनाथ – लड़की की भलाई । लड़की लक्ष्मी-रूपा है। जैसी सुन्दर वैसी ही सरल । ऐसी लड़की यदि दीपक लेकर ढूँढी जाए तो भी कदाचित् ही मिले।

दूसरा – हाँ, यह अवश्य एक बात है।

अमरनाथ – परन्तु लड़की की माता लड़का देखकर विवाह करने को कहती है।

तीसरा – यह तो व्यवहार की बात है।

घनश्याम – और, मैं लड़की देखकर विवाह करूँगा।

दूसरा – यह भी ठीक ही है।

अमरनाथ – तो इसके लिए क्या विचार है ?

तीसरा – विचार क्या, लड़की देखेंगे।

अमरनाथ – तो कब ?

घनश्याम – कल।

दूसरे दिन शाम को घनश्याम और अमरनाथ गाड़ी पर सवार होकर लड़की देखने चले। गाड़ी चक्कर खाती हुई यहियागंज की एक गली के सामने जा खड़ी हुई। गाड़ी से उतरकर दोनों मित्र गली में घुसे। लगभग सौ कदम चलकर अमरनाथ एक छोटे से मकान के सामने खड़े हो गए और मकान का द्वार खटखटाया।

घनश्याम बाले – मकान देखने से तो बड़े गरीब जान पड़ते हैं।

अमरनाथ – हाँ, बात तो ऐसी ही है, परन्तु यदि लड़की तुम्हारे पसन्द आ जाए तो यह सब सहन किया जा सकता है।

इतने में द्वार खुला और दोनों भीतर गए। संध्या हो जाने के कारण मकान में अँधेरा हो गया था। अतएव ये लोग द्वार खोलने वाले को स्पष्ट न देख सके।

एक दालान में पहुँचने पर दोनों चारपाइयों पर बिठा दिए गए और बिठाने वाली ने जो स्त्री थी, कहा – मैं जरा दिया जला लूँ।

अमरनाथ – हाँ, जला लो।

स्त्री ने दीपक जलाया और पास ही एक दीवार पर उसे रख दिया, फिर इनकी ओर मुख करके वह नीचे चटाई पर बैठ गई, परन्तु ज्यों ही उसने घनश्याम पर अपनी दृष्टि डाली – एक हृदयभेदी आह उसके मुख से निकली – और वह ज्ञानशून्य होकर गिर पड़ी।

स्त्री की ओर कुछ अँधेरा था इस कारण उन लोगों को उसका मुख स्पष्ट न दिखाई पड़ता था। घनश्याम उसे उठाने को उठा, परन्तु ज्यों ही उन्होंने उसका सिर उठाया और रोशनी उसके मुख पर पड़ी त्योंही घनश्याम के मुख से निकला – मेरी माता और वे उठकर भूमि पर बैठ गए।

अमरनाथ विस्मित हो काष्ठवत् बैठे रहे अन्त को कुछ क्षण उपरान्त बोले – उफ, ईश्वर की महिमा बड़ी विचित्र है। जिनके लिए तुमने न जाने कहाँ की ठोंकरें खाईं वे अन्त को इस प्रकार मिले।

घनश्याम अपने को सँभालकर बोले – थोड़ा पानी मँगाओं।

अमरनाथ – किससे मँगाऊँ। यहाँ तो कोई और दिखाई ही नही पड़ता, परन्तु हाँ वह लड़की तुम्हारी कहते अमरनाथ रुक गए। फिर उन्होंने पुकारा; बिटिया थोड़ा पानी दे जावो ! परन्तु कोई उत्तर न मिला।

अमरनाथ ने फिर पुकारा – बेटी तुम्हारी माँ अचेत हो गई हैं। थोड़ा पानी दे जाओ।

इस 'अचेत' शब्द में न जाने क्या बात थी कि तुरन्त ही घर की दूसरी ओर बरतन खड़कने का शब्द हुआ। तत्पश्चात् एक पूर्ण वयस्का लड़की लोटा लिए आई।

लड़की मुँह कुछ ढके हुए थी। अमरनाथ ने पानी लेकर घनश्याम की माता की आँखें तथा मुख धो दिया। थोड़ी देर में उसे होश आया। उसने आँखे खोलते ही फिर घनश्याम को देखा। तब वह शीघ्रता से उठकर बैठ गई और बोली – ऐं, मैं क्या स्वप्न देख रही हूँ ? घनश्याम क्या तू मेरा खोया हुआ घनश्याम है? या कोई और ?

माता ने – पुत्र को उठाकर छाती से लगा लिया और अश्रुबिन्दु विसर्जन किए ! परन्तु वे बिन्दु सुख के थे अथवा दुख के कौन कहे ?

लड़की ने यह सब देख सुनकर अपना मुँह खोल दिया और भैया–भैया करती हुई घनश्याम से लिपट गई। घनश्याम ने देखा – लड़की कोई और नहीं वही बालिका है जिसने पाँच वर्ष पूर्व उनके राखी बाँधी थी और जिसकी याद प्रायः उन्हें आया करती थी।

× × ×

श्रावण का महीना है और श्रावणी का महोत्सव। घनश्यामदास की कोठी खूब सजाई गई है। घनश्याम अपने कमरे में बैठे एक पुस्तक पढ़ रहे हैं। इतने में एक दासी ने आकर कहा – बाबू भीतर चलो। घनश्याम भीतर गए। माता ने उन्हें एक आसन पर बिठाया और उनकी भगिनी सरस्वती ने उसके तिलक लगाकर राखी बाँधी। घनश्याम ने दो अशर्फियाँ उसके हाथ में धर दीं और मुस्कुराकर बोले – क्या पैसे भी देने होंगे?

सरस्वती ने हँसकर कहा – नहीं भैया, ये अशर्फियाँ पैसों से अच्छी हैं। इनसे बहुत से पैसे आवेंगे।

अभ्यास

1. घनश्याम ने अपनी माता और बहिन की खोज कहाँ–कहाँ की ?
2. नाटकीय ढंग से हुए माँ–बेटे और बहिन के मिलन के दृश्य का वर्णन कीजिए।
3. ''अमरनाथ एक सच्चा मित्र है।'' क्यों कहा गया है ?
4. ''यह सब मेरे ही कर्मों का फल है'' घनश्याम के इस कथन के आलोक में माँ–बेटे के बिछुड़ने की घटना का वर्णन कीजिए।
5. प्रस्तुत कहानी के माध्यम से कहानीकार क्या सन्देश देना चाहता है ?

योग्यता विस्तार

1. 'रक्षाबंधन' त्योहार से जुड़े अन्य प्रसंगों के सम्बन्ध में तुमने और कौन–कौन सी कहानियाँ पढ़ी अथवा सुनी हैं, उन्हें सूचीबद्ध करिए।
2. रक्षाबंधन की तरह दीपावली, होली, क्रिसमस, ईद आदि त्योहार की कहानियाँ खोजिए।
3. इस कहानी का क्या और भी कुछ अंत हो सकता था? लिखिए।

शब्दार्थ

अप्रतिम = अद्वितीय। **विद्यमान** = उपस्थित। **चेष्टा** = प्रयत्न। **उद्यत** = तत्पर। **अधीर** = बेचैन। **कृतज्ञता** = आभार। **विरक्त** = वैराग्य। **पूर्वोक्त** = पहले की। **दृश्य** = चित्र। **प्रतीत** = अनुभव। **धनाढ्य** = अमीर **दरिद्र** = गरीब। **हृदयभेदी** = हृदय में चुभने वाली। **विस्मित** = आश्चर्यचकित। **काष्ठवत्** = निर्जीव खिलौने की तरह। **अचेत** = मूर्च्छित/बेहोश। **अशर्फी** = सोने का सिक्का।